SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समकालीन आदिवासी साहित्य का परिदृश्य

सुधीर शर्मा, (Ph.D.) शोध–निर्देशक, हिंदी विभाग
कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेक्टर–07, भिलाई नगर, दुर्ग, छत्तीसगढ़, भारत
गिरधर प्रसाद चंद्रा, शोधार्थी,
कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेक्टर–07, भिलाई नगर, दुर्ग, छत्तीसगढ़, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Authors
सुधीर शर्मा, (Ph.D.) शोध–निर्देशक, हिंदी विभाग
कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेक्टर–07,
भिलाई नगर, दुर्ग, छत्तीसगढ़, भारत
गिरधर प्रसाद चंद्रा, शोधार्थी,
कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेक्टर–07,
भिलाई नगर, दुर्ग, छत्तीसगढ़, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 01/04/2021
Revised on : -----
Accepted on : 08/04/2021
Plagiarism : 00% on 01/04/2021

Plagiarism Checker X Originality Report
Similarity Found: 0%

Date: Thursday, April 01, 2021
Statistics: 0 words Plagiarized / 1775 Total words
Remarks: No Plagiarism Detected - Your Document is Healthy.

----

or7eku ifjizs(;esa ledkyhu vkfnoklh lkfgR; dk ifjn`'; vkfnoklh lkfgR; dks izLrqr djus ds ihNs vkfnokfl;ksa dks ys[ku ds izfr izksRlkfgr dj vkfnokfl;ksa dh yqIr gksrh laLd`fr] mudh Hkk"kk dks laj{k.k iznku djukA ;g lc dk;Z lkfgR; ds }kjk gh fd;k tk ldrk gSA ledkyhu vkfnoklh lkfgR; ds vkxeu ls vkfnokfl;ksa ds izfr yksxksa dh n`f"Vdks.k

esa ifjorZu vkck gS] ns'k ds reke lkfgR;ksa esa vkfnoklh lkfgR; dks Hkh egRoiw.kZ LFkku

शोध सार

आदिवासी साहित्य को प्रस्तुत करने के पीछे आदिवासियों को लेखन के प्रति प्रोत्साहित कर आदिवासियों की लुप्त होती संस्कृति, उनकी भाषा को संरक्षण प्रदान करना। यह सब कार्य साहित्य के द्वारा ही किया जा सकता है। समकालीन आदिवासी साहित्य के आगमन से आदिवासियों के प्रति लोगों की दृष्टिकोण में परिवर्तन आया है, देश के तमाम साहित्यों में आदिवासी साहित्य को भी महत्वपूर्ण स्थान मिला। साहित्य की सभी विधा कहानी, उपन्यास, नाटक, कविता के माध्यम से आदिवासियों के साहित्य को स्थान मिल रहा है। आदिवासी साहित्य, परंपरा के पोषण के साथ आदिवासियों की वास्तविकता का दर्पण भी है। आदिवासी जीवन दर्शन, इन आदिवासी साहित्यों में प्रचुर मात्रा में दिखाई पड़ रहा है, जो साहित्य की सकारात्मकता का परिचायक है। इस प्रकार आदिवासी साहित्य, आदिवासियों की संस्कृति, परंपरा, संघर्ष, इतिहास का स्तरीय साहित्य है।

मुख्य शब्द

संस्कृति, आदिवासी अस्मिता, भूमंडलीकरण, बाजारवाद.

साहित्य, समाज को एक नयी राह दिखाता है, नवल सृजन प्रदान करता है। 20वीं सदी के अंतिम दशकों में देश की सामाजिक व्यवस्था में बहुत उथल–पुथल हुए। कई आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव देश के सामाजिक ढांचा पर भी पड़ा। उन्हीं आन्दोलनों में एक आन्दोलन आदिवासी समाज से भी जुड़ा रहा, जो आदिवासी कल तक असहाय सा अपने शोषण को देखते रहे थे, आज उनमें भी प्राण चेतना का संचार हुआ। उनकी दर्द, पीड़ा, प्रतिरोध साहित्यिक

रचनात्मक स्वरूप में आगे बढ़ा। 1991 के बाद सरकार द्वारा लिए गए नीतिगत निर्णय, आर्थिक उदारीकरण के अंतर्गत बाजारवाद व व्यापारवाद का जो परिणाम सामने आने लगा, उसने आदिवासियों को झकझोर कर रख दिया अब परंपरा को बचाने विरोध के सिवा कोई रास्ता नहीं रहा। वे आन्दोलित हो गये, अपनी संस्कृति, परंपरा की रक्षा के लिए। सभी अपने स्तर पर इसके प्रतिरोध में खड़े हो गये। इसी प्रतिरोध में साहित्य की भी बड़ी भूमिका रही। कहा जा सकता है, समकालीन आदिवासी साहित्य का पर्दापण हुआ, बाजारवाद और सत्ता में बैठे ठेकेदारों ने आदिवासियों के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लगा दिया। अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए जो साहित्यिक स्वरूप सामने आया, वही समकालीन आदिवासी साहित्य की नींव थी।

आदिवासी आदि सभ्यता के जनक हैं। आज जो संस्कृति, परंपरा हमें परिष्कृत रूप से सभ्य समाज में देखने को मिलती है, उसका जनक आदि सभ्यता ही रहा है, हम उनके अस्तित्व को कभी भी नकार नहीं सकते। उनका जीवन हमारे जीवन का ही हिस्सा रहा है। आदि समय से जब–जब आदिवासियों के अस्तित्व पर खतरा मंड़राया है आदिवासियों ने समूह के साथ उसका सामना किया है। वे एक दूसरे को प्रोत्साहित करने से लेकर दुख का समय हो या सुख की अनुभूति, अपने मौखिक साहित्य के माध्यम से अपनी भाषा में व्यक्त जरूर किये हैं। आदिवासी अस्मिता एवं अस्तित्व को बचाने में समकालीन आदिवासी साहित्य अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। समकालीन आदिवासी साहित्य के साहित्यकारों ने आदिवासियों की समस्याओं को हिन्दी भाषा में लेखनी के माध्यम से प्रस्तुत किया है, साथ ही साथ आदिवासियों की संस्कृति, उदात्त जीवन शैली एवं भाषा की प्रस्तुतिकरण से हिन्दी साहित्य भी समृद्ध हुआ है। आदिवासी साहित्यकारों ने अपनी लेखनी के माध्यम से अपनी आदिवासी संस्कृति और परंपरा को कुचलने के कुत्सित प्रयास का पुरजोर प्रतिरोध किया हैं। डॉ. गंगा सहाय मीणा आदिवासी साहित्य के संदर्भ में कहते हैं कि–"आज का आदिवासी विमर्श अस्तित्व और अस्मिता का विमर्श है। चूँकि आदिवासी साहित्य अपनी रचनात्मक उर्जा आदिवासी विद्रोहों की परंपरा से लेता है इसलिए उन आंदोलनों की भाषा और भूगोल भी महत्वपूर्ण रहा है आदिवासी रचनाकारों का मूल साहित्य उनकी इन्ही भाषाओं में है। हिन्दी में मौजूद साहित्य देशज भाषाओं में उपस्थित साहित्य की इसी समृद्ध परंपरा से प्रभावित है, कुछ साहित्य का अनुवाद और रूपांतर भी हुआ है। भारत में तमाम आदिवासी भाषाओं में अनूदित और रूपांतरित होकर एक राष्ट्रीय स्वरूप ग्रहण कर रहा है। प्रकारांतर से पूरा आदिवासी साहित्य विस्सा, सीद्दो कानू और तमाम क्रांतिकारी आदिवासियों और उनके आंदोलनों से विद्रोह चेतना का तेवर लेकर आगे बढ़ रहा है।"[1]

स्पष्ट है कि आदिवासी चेतना के विकास एवं शिक्षा के प्रसार के साथ आदिवासी रचनाकारों में आदिवासी साहित्य के प्रति दृष्टिकोण बदला है। हिन्दी एवं देशज भाषाओं के रचनाकारों की संख्या में इजाफा हुआ है, जो आदिवासी विमर्श पर साहित्य की सभी विधाओं में रचना कर रहे हैं।

आदिवासी साहित्य के विषय में डॉ. विनायक तुकाराम ने विस्तारपूर्वक एवं गंभीर विवेचन करते हुए लिखा है–"आदिवासी साहित्य वन संस्कृति से संबंधित साहित्य है। यह आदिवासी साहित्य, उन वन–जंगलों में रहने वाले वंचितों का साहित्य है, जिनके प्रश्नों का अतीत में कभी उत्तर ही नहीं दिया गया। यह ऐसे दुर्लक्षितों का साहित्य है, जिनके आक्रोश की ओर यहाँ की समाज व्यवस्था ने कभी कान ही नहीं दिए। यह गिरिकन्दराओं में रहने वाले अन्याय ग्रस्तों का क्रांति– साहित्य है। यहाँ की क्रूर और कठोर न्याय–व्यवस्था ने जिनकों सैकड़ों पीढ़ियों को आजीवन वनवास दिया, उस आदिम समूह का मुक्ति साहित्य है, यह। वनवासियों का क्षत जीवन जिस संस्कृति की गोद में छुपा रहा, उसी संस्कृति के प्राचीन इतिहास की शुरूआत करने वाला है यह साहित्य। आदिवासी साहित्य इस भूमि से प्रसूत आदिम वेदना तथा अनुभव का शब्दरूप है।"[2]

वर्तमान समय में समकालीन आदिवासी साहित्य, आदिवासियों के शोषण, दोहन के प्रतिरोध व आदिवासियों के अस्तित्व को बचाने के लिए एक आंदोलन का रूप ले चुका है। शासन के नीतिगत निर्णय के अनुसार आर्थिक उदारीकरण के कारण बाजारवाद के बढ़ते प्रभाव से आदिवासियों को जल, जंगल, जमीन से बेदखल कर उनकी भावनाओं को ताक में रखकर खेले जा रहे खेल का प्रतीकात्मक स्वरूप स्पष्ट दिखाई देता है।

समकालीन आदिवासी साहित्य के आगमन से आदिवासियों के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में परिवर्तन आया है, देश के तमाम साहित्यों में आदिवासी साहित्य को भी महत्वपूर्ण स्थान मिला। साहित्य जगत से जुड़ी हिन्दी एवं देशज भाषायी पत्रिकाओं ने आदिवासियों की अस्मिता और अस्तित्व से जुड़े मुद्दे उठाये जिससे आदिवासियों से जुड़े सृजनात्मक साहित्य को प्रोत्साहन मिला। आदिवासी चेतना के विकास एवं शिक्षा के प्रसार के साथ आदिवासी रचनाकारों में आदिवासी साहित्य के प्रति दृष्टिकोण बदला है। हिन्दी एवं देशज भाषाओं के रचनाकारों की संख्या में इजाफा हुआ है, जो आदिवासी–विमर्श पर साहित्य की सभी विधाओं में रचना कर रहे हैं। आदिवासियों के साहित्य को बढ़ावा देने के लिए आदिवासी सम्मेलन के साथ साहित्य मंच की भी स्थापना किया गया। "अखिल भारतीय आदिवासी साहित्यिक मंच का गठन 02–06–2006 को किया गया जिसमें तय हुआ कि आदिवासी लेखकों को अपनी राजनीति, अपने समाज, अपने प्रकृति संसाधन, जल–जंगल–जमीन, अपनी संस्कृति, भाषा–बोली, लिपि, कला इतिहास, आत्मसम्मान तथा पहचान और अधिकारों के सवाल पर स्वयं आगे आकर लिखने–बोलने के लिए प्रोत्साहित किया जाए।"[3]

स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि वर्तमान समय में आदिवासी साहित्य को बढ़ावा देने हेतु भरसक प्रयास किये जा रहे हैं। जो आदिवासी साहित्य को समृद्धशाली बनाने हेतु एक सार्थक प्रयास है।

आदिवासी इस समूचे ब्रह्मांड के आदि निवासी है, उनका जीवन जल–जंगल–जमीन पर निर्भर है। वे प्रकृति के पोषक तथा उसके सजग प्रहरी के रूप में सदियों से चले आ रहे हैं, पर अचानक आज उनको उन्ही की संस्कृति से बेदखल किया जा रहा है जिसके कारण उनका जीवन कष्टों से भर गया है। उनकी मासूमियत गायब सी हो गयी है, वे डरे सहमे से जिंदगी जीने को मजबूर हैं तथा कथित उच्च गैर आदिवासी संस्कृति को समाज द्वारा अपनी संस्कृति परंपरा उन पर जबरन थोपना, आदिवासी संस्कृति को समूल नष्ट करने की बड़ी साजिश है जो आदिवासी समाज को कतई मंजूर नहीं है। समकालीन साहित्यकारों ने अपनी रचना के माध्यम से उनका पक्ष रखने का प्रयास किया है।

वर्तमान समय में भूमण्डलीकरण, औद्योगीकरण, बाजारवाद पूरी दुनिया में मानवता के दुश्मन के रूप में नजर आ रही है। आदिवासी जीवन, उनकी संस्कृति, सभ्यता, भाषायी अस्मिता के लिए संकट का समय है। प्रकृति और आदिवासियों का संबंध एक अटूट संबंध रहा है पर आज वह खंडित होने के कगार पर खड़ा है। भूमण्डलीकरण के दौर में अदिवासियों की संस्कृति जैसे बंधक बनाकर रखी जा रही थी। यह समय आदिवासियों के जीवन का भयंकर अतिसंक्रमण का समय रहा। आदिवासियों का जीवन, उनकी संस्कृति, उनकी भावना को भूमण्डलीकरण के इस नासूर ने अलग–थलग कर रख दिया है। उनका जीवन नीरस हो गया है। वर्तमान परिस्थिति में आदिवासियों की जीवनशैली पर समाज में हो रहे भूमण्डलीकरण, बाजारवाद के कारण अत्यंत गहरा प्रश्नचिन्ह लगा दिया, जिसे सब महसूस कर रहे हैं। आदिवासियों को जीवन का अनुभव है, वे प्रकृति के उपासक और सचेतक हैं, जिसका जीवन आज बड़ी कठिन परिस्थिति से गुजर रहा है।

वर्तमान समय में बाजारवाद ने लोगों की सोचने, समझने की शक्ति छीन ली है। लोग स्वार्थ पर जीना शुरू कर चुके हैं, बाहरी चकाचौंध वास्तविकता पर भारी पड़ गया है। वर्तमान परिस्थिति में आदिवासियों के सम्मुख सबसे बड़ी चुनौती है, आधुनिकता। आधुनिकता आवश्यक है पर प्रकृति का दोहनकर उसके बदले में आधुनिकता का ढिंढोरा पीटना आदिवासी समाज को कतई मंजूर नहीं। वे प्रकृति जिनसे आदिवासियों का आत्मीय संबंध रहा है। उनकी नजरों में जल, जंगल, जमीन, पेड़–पौधे, नक्षत्र, हवा, पानी सबका अपना जीवन है।

"अब आदिवासी नई विचाराधाराओं और क्रांतियों के परिप्रेक्ष्य में अपनी नई पुरानी स्थितियों को तौलने लगा है। उनमें अपने होने, न होने, अपने साथ हुए भेदभाव व अन्याय का बोध भी जगा है और अब यही बोध उनके साहित्य में भी झलक रहा है। यहीं से आदिवासी कविता का एक दूसरा रूप सामने आता है जिसमें आक्रोश है, प्रतिरोध है, ललकार है, दर्द है तो चुनौती भी है।"[4]

आदिवासी समाज जिस अपेक्षा का दर्द झेल रहा था, निश्चित है– उनके अंदर ज्वाला धधक रही थी। उनके अपने ठगे जाने का अहसास हो रहा था उनकी संस्कृतिक, परंपरा जैसे खोते जा रही है। आदिवासियों को जल, जंगल, जमीन से विस्थापित किया जा रहा था तो निश्चित है प्रतिरोध होना, क्योंकि समय के साथ आदिवासियों में भी चेतना का विकास हो रहा था। इसी चेतना को विस्तृत कर अपनी लोक साहित्य की परंपरा को आधार मानकर समकालीन साहित्य की शुरूआत आदिवासियों ने की।

आदिवासी साहित्य के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित करने में आदिवासी साहित्यकारों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। नब्बे के दशक में आदिवासियों की चेतना के विकास के साथ आदिवासी साहित्यकारों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। सभी साहित्यकारों ने हिन्दी भाषा के साथ देशज भाषा में भी रचना के माध्यम से आदिवासी जीवन के सभी पहलुओं का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। आदिवासी रचनाकार बाबूलाल मुर्मू आदिवासी, शिशिर टुडू, मंगल सिंह मुंडा, रामदयाल मुंडा, सिकरादास तिर्की, मंजू ज्योत्सना, महादेव टोप्पो, भुजंग मेश्राम, वाहरू सोनवणे, हरिराम मीणा, लक्ष्मण गायकवाड, सुनील मिंज, अनुज लगुन आदि रचनाकारों ने आदिवासी जीवन के प्रतिरोध एवं संघर्ष को रचनाओं के माध्यम से बयां किया है।

निष्कर्ष

समकालीन आदिवासी साहित्य का लेखन कार्य अंग्रेजी, हिन्दी व देशज भाषा में किया जा रहा है। आदिवासी साहित्य, परंपरा के पोषण के साथ आदिवासियों की वास्तविकता का दर्पण भी है। आदिवासी जीवन दर्शन, इन आदिवासी साहित्यों में प्रचुर मात्रा में दिखाई पड़ रहा है जो साहित्य की सकारात्मक का परिचायक है। हम कह सकते हैं कि वर्तमान समय में समकालीन आदिवासी साहित्य तेजी से समृद्धशाली बन रहा है।

संदर्भ सूची

1. https://wwwforwardpress.in/gangasahaymeena/15april/2016
2. गुप्ता, रमणिका (संपादक), *आदिवासी स्वर और नई शताब्दी–2,* विनायक तुकाराम आदिवासियों की अब तक की साहित्य यात्रा (युद्धरत आम आदमी विशेषांक–2002, पूर्णांक 61) पृष्ठ क्रमांक–18
3. गुप्ता, रमणिक (संपादक), *आदिवासी लेखन एक उभरती चेतना,* नई दिल्लीः सामयिक प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2017, पृष्ठ क्रमांक–10
4. मीणा, रमेश चंद्र (संपादक), *आदिवासी विमर्श.* जयपुर, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, प्र.सं. 2013, पृष्ठ क्रमांक–199

****